स्वर्ण काल के जनक थे कबीर

- साकेत दुबे

कबीर "कबीर" हैं। उन्होंने पाठशाला जाने से इनकार कर दिया। कबीर ने पढ़ने से दूरी बनाने और पुस्तकों को बहा देने की बात की। बावन अक्षरों में से केवल दो-'ररै एवं ममै' को चित्त में लाने की सलाह दी। वे कहते हैं, "कबीर पढ़िवो दूरि करि, पुस्तक देइ बहाइ। बावन आषिर सोधि करि 'ररै','ममै' चित लाइ। उन्होंने पढ़ने के मामले में केवल "एकै आखर पीव का पढ़ने की बात की। क्योंकि वे अपने आसपास पोथियों पर पोथियाँ पढ़ने वाले लोग देखते हैं लेकिन उनमें से कोई भी 'पीव' के मर्म को समझने वाला नहीं था। इसीलिए उन्होंने पोथियाँ पढ़ने वालों से सीधे-सीधे कहा, "पोथी पढ़-पढ़ जग मुआ पंडित भया न कोए, एकै आखर पीव का, पढ़े सु पंडित होय"।

कबीर चाहते तो पाठशाला जा सकते थे। उनके आसपास बहुत बड़े-बड़े विद्वान थे। संस्कृत और फारसी जानने वाले थे। लेकिन नहीं गए। उन्होंने तय किया कि अपने पास जो है उसी से सीखेंगे। किसी के पास नहीं जाएंगे। नहीं गए। उनके घर में चरखा था। उसे चलाना सीखा। उसे चलाते और गा उठते, "काहे का ताना, काहे का बाना, कौन तार से बीनी चदरिया..."। प्रसिद्ध चिंतक कपिल तिवारी कहते हैं, "कबीर ने चादर के साथ राम को बुना।" श्री तिवारी कहते हैं, "कबीर ने तो धोखे से रामानंद को अपना गुरु बनाना भी उचित नहीं समझा"। वे सवाल उठाते हैं, "कबीर जैसे खरे व्यक्ति', रामानंद से धोखे से शिष्यत्व ग्रहण करेंगे? बिल्कुल नहीं। बल्कि रामानंद ने जब कबीर के खरे होने के संबंध में सुना और देखा होगा तब स्वयं गए होंगे गुरु दीक्षा देने"। कबीर का खरापन भी यही साबित करता है। कबीर वह व्यक्ति हैं जिनकी कथनी-करनी में अंतर नहीं है। वे कहते भी हैं, "जैसी मुख से निकसी, तैसी चाल..."।

जब रामानंद कबीर के पास गए होंगे तब वे उन्हें देखकर अपना आपा (अहंकार) खोकर उनसे प्रेम से मिले होंगे। इसकी वजह भी है। रामानंद वही व्यक्ति हैं जिन्होंने कहा, "जात पात पूछे नहीं कोई/जो हरि को भजे सो हरि का होई"। यह बात कबीर को जमी होगी। कारण सीधा सा है-कबीर की जात को लेकर उनके समय में बहुत सारे सवाल थे। जातिगत भेदभाव चरम पर था। कबीर की जाति को लेकर लोग उन्हें बहुत कुछ कहते भी थे। ऐसे में कोई रामानंद आए और जात-पात के भेदभाव को मिटाने की बात कहे और बताए कि सब 'हरि' के हैं। यानी बिना किसी जातिगत भेदभाव के समानता/बराबरी की बात करे तब तो बहुत ही स्वाभाविक है कि कबीर उन्हें अपना गुरु मानेंगे ही। कबीर के जीवन में जातिगत भेदभाव से लेकर तमाम किस्म के जो दु:ख और द्वंद्व हैं । वे सभी रामानंद के मिलते ही मिट जाते हैं। कबीर कहते भी हैं, "सद्गुरु के परताप तें मिटि गयो सब दुख-दंद।/कह कबीर दुबिधा मिटी, गुरु मिलिया रामानंद"। जब दु:ख और द्वंद्व मिट गए तब उन्हें अपनी जाति को डंके चोट पर बताया, "जाति जुलाहा, मति कौ धीर"। 'माया' से संवाद में वे अपना नाम बताते हुए, और भी साफगोई से कहते हैं, "जाति जुलाहा नाम कबीरा...।... आइ हमारै कहा करोगी हम तौ जाति कमीना"। ऐसा खरा व्यक्ति जो अपनी जात नहीं छुपाता, शिष्य बनने की जुगत नहीं लगाता, वह पाठशाला जाएगा? यही खरापन है जिसने रामानंद को अहसास करा दिया कि कबीर ही उनके शिष्य बनने लायक है। इसीलिये वे कबीर के पास गए।

रामानंद 'भक्ति' दक्षिण से लेकर आए थे। उसे उत्तर भारत में प्रकट करना चाहते थे। इसे प्रकट करने के लिए उन्हें खरेपन के कारण कबीर ही उपयुक्त लगे होंगे। उन्होंने कबीर को राम की भक्ति का रस चखा दिया। रामानंद से प्रेम भक्ति के पाने के संबंध में हजारी प्रसाद द्विवेदी कहते हैं, "प्रेम भक्ति के असाधारण रस को पीकर कबीर धन्य हो गए, "धावत जोनि जनम भ्रमि थाके अब दुखकै हम हार् यौ रे। कहि कबीर गुरु मिलत महारस प्रेम भगति बिस्तार् यौ"। कबीर ने रामानंद से पाई प्रेम भक्ति को प्रकट कर दिया। अर्थात् उसके महारस को जन-जन तक पहुंचा दिया। कबीर की प्रेमाभक्ति एक ऐसा आंदोलन बन गई जो सदियों तक चला। इसमें एक से बढ़कर एक कवि हुए। एक पूरा कालखंड भक्ति काल कहलाता है। इस कालखंड को कपिल तिवारी स्वर्ण काल कहते हैं। यह जागरुकता का ऐसा काल है जिसमें बिरले कबीर से लेकर संत कवि तुलसीदास तक जागते हैं। कबीर कहते भी हैं, "जागत रहियो"। सतत जागरुक रहने वाले को किसी पाठशाला की जरूरत नहीं होती है। (प्रस्तुति(मनुज फीचर सर्विस :

नोट: मनुज फीचर में छपे लेखों के विचार लेखक के अपने हैं। माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता एवं संचार विश्वविद्यालय का इनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है। यहां प्रकाशित सामग्री का उपयोग गैर व्यावसायिक कार्यों के लिए करने हेतु किसी अनुमति की आवश्यकता नहीं है। मनुज फीचर सर्विस का उल्लेख अवश्य करें।